आदिवासी साहित्य विमर्श

30 रुपए

वागर्थ

अंक 284 मार्च 2019

कहानियाँ

ज्ञानप्रकाश विवेक सुधा ओम ढींगरा
सोनम सिंह रघुबीर ढंड पद्मा शर्मा

स्मरण और अप्रकाशित साक्षात्कार : कृष्णा सोबती

रमेश कुंतल मेघ और खगेंद्र ठाकुर के आलेख

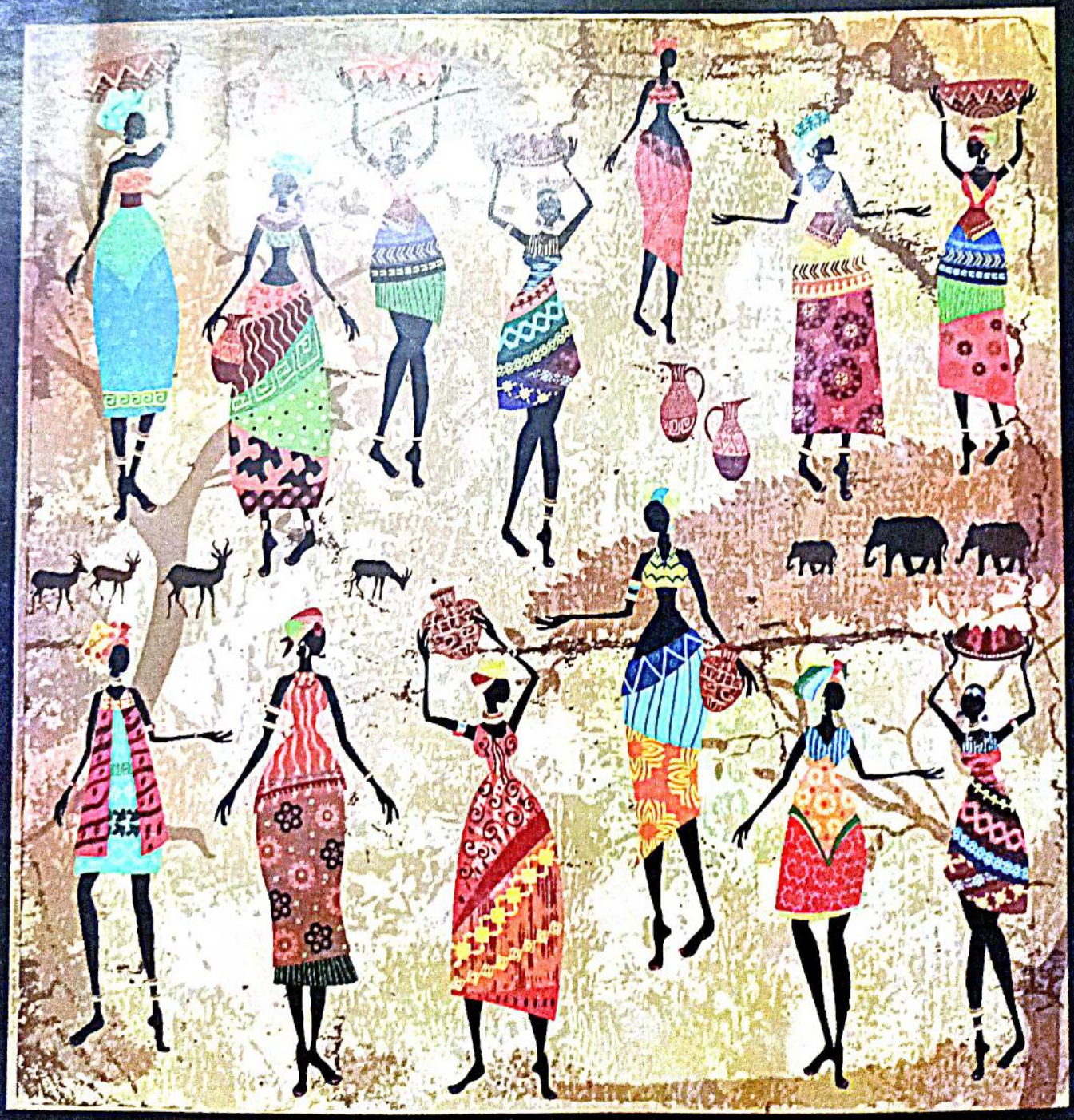

भारतीय भाषा परिषद

ISSN : 2394-1723

वागर्थ

भारतीय भाषा परिषद की मासिक पत्रिका
वर्ष 25, अंक 284, मार्च 2019

संरक्षक
इंद्रनाथ चौधुरी
स्वपन चक्रवर्ती

संपादक
शंभुनाथ

प्रबंध संपादक
डॉ. कुसुम खेमानी

प्रकाशक
नंदलाल शाह

संपादन सहयोग

अंक सज्जा
सुशील कान्ति

संपादकीय विभाग
36 ए, शेक्सपियर सरणी
कोलकाता–700017
vagarth.hindi@gmail.com
7449503734
(दिन 12 बजे से संध्या 6 बजे)

आवरण
तारकनाथ राय

इस अंक में

संपादकीय 5

श्रद्धांजलि : कृष्णा सोबती, नामवर सिंह

एक छायादार दरख्त का टूटना : **भारती सिंह** 12

कृष्णा सोबती से **कमल कुमार** का साक्षात्कार 14

नामवर सिंह : सादगी की गरिमा 17

कहानियाँ

खत : **ज्ञान प्रकाश विवेक** 18

खिड़कियों से झाँकती आँखें : **सुधा ओम ढींगरा** 27

फाइल : **पद्मा शर्मा** 35

संदूक कहाँ है : **सोनम सिंह** 39

बाहर के लोग (पंजाबी कहानी) : **रघुबीर ढंड** 43
(अनुवाद : **फूलचंद मानव**)

कविताएँ

**जाबिर हुसेन/भारत यायावर/हरीश चंद्र पांडे/
स्वप्निल श्रीवास्तव/अतुल जैन/अजय कुमार पांडे
अनिरुद्ध सिन्हा/गौरव गुप्ता/पूजा कुमारी** 49

मराठी कविताएँ : **संध्या रंगारी** (अनुवाद : **सूर्यनारायण रणसुभे**) 61

परिचर्चा

आदिवासी साहित्य विमर्श : **हरिराम मीणा/महादेव टोप्पो/वाल्टर भेंगरा 'तरुण'/प्रमोद मीणा/सुनील कुमार 'सुमन'/विश्वासी एक्का**
(प्रस्तुति : **अनुज लुगुन**) 63

पुट मिलता है, जो उन्हें दूसरे कवियों से अलग करता है। आदिवासी लेखन में कथा साहित्य को और समृद्ध होना है। लेकिन विचार-चिंतन के क्षेत्र में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। शेष विधाओं में भी धीरे-धीरे काम होगा।

(11) दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र सवर्ण वर्चस्व के सौंदर्यशास्त्र से भिन्न है। वैसे ही आदिवासी साहित्य का सौंदर्यशास्त्र भी सवर्ण वर्चस्व के सौंदर्यशास्त्र से भिन्न है। कतिपय मामलों में वह दलित सौंदर्यशास्त्र से भी भिन्न है। यह प्राकृतिक दर्शन पर आधारित है। इसके केंद्र में उच्च मानवीय मूल्य होते हैं। इस सौंदर्यशास्त्र में मनुष्यों के साथ पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं, नदी-नालों और पहाड़ों के लिए भी जगह होती है। आदिवासी सौंदर्यशास्त्र में अलग से किसी 'वाद' को चलाने की जरूरत नहीं है। यह अपनी मौलिकता और स्वाभाविकता के लिए जाना जाता है और हर प्रकार के बनावटीपन का निषेध करता है। यह सामुदायिकता के दर्शन पर आधारित सौंदर्यशास्त्र है जिसके केंद्र में प्रेम, भाईचारा, संवेदना और जीवन है।

(12) आज आदिवासी समाज की जो इतनी बर्बादी हो रही है, वह सब एक कुचक्र का नतीजा है। हिंदू धर्म से आदिवासी समाज का दूर-दूर तक कभी कोई नाता नहीं रहा है, पर आदिवासियों के जीवन में आज जबरन अंधविश्वास और कर्मकांड घुसाए जा रहे हैं। झारखंड में आदिवासी उत्पीड़न की इंतेहा हो गई। लोग ईसाई और गैर-ईसाई आदिवासियों में लड़ाई कराने के काम में लगे हुए हैं। आज के समय को देखते हुए आदिवासी समाज को खुद को तैयार करना होगा। अब तीर-धनुष का नहीं, कलम के माध्यम से बौद्धिक लड़ाई का समय है। आदिवासियों को उन तमाम बहुजन महापुरुषों के विचारों और उनके योगदान को जानना-समझना होगा, जिन्होंने इस देश में ब्राह्मणवादी व्यवस्था से सबसे ज्यादा लड़ाई लड़ी थी। आदिवासियों को ऐसे वंचित समूहों के साथ मिल कर अपनी गोलबंदी मजबूत करनी होगी, तभी आज के और आगामी संकट का मुकाबला यह समाज कर पाएगा।

प्रभारी, हिंदी विश्वविद्यालय क्षेत्रीय केंद्र, ऐकतान, आई ए- 290, साल्ट लेक, सेक्टर-03, कोलकाता-700097, मो. 9552733202

कला प्रेमियों को अर्धवस्त्र में स्तनपान कराती आदिवासी युवती अच्छी लगती है तो आदिवासी साहित्य क्यों पसंद नहीं आता

विश्वासी एक्का

(1) अनुसूचित जनजाति अर्थात शिड्यूल ट्राइब या एस.टी. एक प्रशासनिक शब्द है जो संविधान द्वारा प्रदत्त है। जन सामान्य के बीच अनुसूचित जनजातियों के लिए 'आदिवासी' शब्द ही बहु प्रचलित है। भारत के प्राचीन ग्रंथों में इसका उल्लेख भील, कोल, किरात, निषाद आदि नामों से मिलता है। समाजशास्त्रियों और मानवशास्त्रियों ने जनजातियों की परिभाषा लगभग एक जैसी दी है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 में जनजाति समुदायों की पहचान कर उनकी सूची तैयार कर इसे संविधान में विनिर्दिष्ट किया गया। हिंदुत्ववादी संगठनों द्वारा जनजातियों को 'वनवासी' नाम देना संदेह उत्पन्न करता है, क्योंकि इसमें आर्यों की श्रेष्ठता का बोध समाहित है। आदिवासियों को यह

स्वीकार नहीं है। 'आदिवासी' होने से जो इतिहास और सांस्कृतिक विशेषता का बोध होता है, वह दूसरे विशेषणों में नहीं है।

(2) संविधान में आदिवासियों को उनका पहचानमूलक विशेषण नहीं मिला, यह उस समय की परिस्थितियों की वजह से होगा। लेकिन आज जबकि आदिवासी समुदाय पर हर तरफ से हमले हो रहे हैं और उनका अस्तित्व संकटग्रस्त हो गया है, ऐसे में उन्हें 'आदिवासी' होने का पहचानमूलक विशेषण मिलना चाहिए।

(3) देश में आदिवासी समुदायों के लिए पांचवीं और छठी दो अनुसूचियाँ हैं। दोनों में अलग-अलग शक्तियाँ और प्रावधान हैं। मुझे नहीं लगता है कि इससे विभाजन की स्थिति बनती है। पूर्वोत्तर के राज्यों में छठी अनुसूची लागू है और शेष भारत में जहाँ आदिवासी निवास करते हैं वहाँ पांचवीं अनुसूची है। इसके अपने भौगोलिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक कारण हैं। यह परिस्थितिजन्य है। कहीं-कहीं दोनों अनुसूचियाँ हैं जैसे बलाघाट का क्षेत्र। इसे स्वीकार किया जाना चाहिए। शहरी क्षेत्र के आदिवासियों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वहाँ मिश्रित जनसंख्या होने के कारण उन्हें दिक्कत होती है। कई ऐसे आदिवासी बहुल क्षेत्र हैं, जहाँ उन्हें किसी भी अनुसूची में शामिल नहीं किया गया है। जैसे अंडमान निकोबार, लक्षद्वीप, दादर, नागर हवेली, जम्मू-कश्मीर आदि। यह विडंबना है। धर्म और राजनीति आदिवासियों को निरंतर विभाजित करने का काम कर रही हैं।

(4) आज साहित्य जगत में आदिवासी विमर्श की आवाज जोर-शोर से सुनाई दे रही है, साथ ही उच्च शिक्षण संस्थाओं में कुछ वर्षों से निरंतर शोध कार्य, संगोष्ठियाँ और कार्यशालाएँ आयोजित की जा रही हैं। इनसे नवीन तथ्य और सूचनाएँ प्राप्त हो रही हैं, कई बातों से पर्दा उठ रहा है। इनसे निश्चय ही साहित्य के विमर्शकार लेखक आदिवासियों के जीवन से जुड़े सवालों से परिचित हो रहे हैं। साथ

ही, साहित्य के अध्येताओं की चाहे वे सामान्य हों या विशिष्ट, आदिवासियों को देखने-समझने की दृष्टि विकसित हो रही है। उनसे जुड़ाव और संवेदनात्मक सोच बन रही है। यह समय की मांग है और 'भारतीय एकता' की स्थापना के लिए अति आवश्यक है। आदिवासी विमर्शकारों के लिए आदिवासी विमर्श अवसर की तरह है या एक रूमानियत है, ऐसे प्रश्न भी उठ रहे हैं तो थोड़ी ही सही सचाई होगी। कोई भी व्यक्ति आदिवासी समाज या पाठक को ज्यादा समय धोखे में नहीं रख सकता। साहित्य का सजग पाठक उसे जल्दी ही नकार देगा।

(5) आदिवासियों के शोषण-दमन, उत्पीड़न, अधिकार-हनन, अपमान, आदिवासी अस्मिता पर मंडराते खतरे जैसे सवालों से आदिवासी विमर्श की शुरुआत हुई। इसकी संवेदना और वैचारिकी उबड़-खाबड़ और कांटों से भरे रास्तों पर आगे बढ़ती हुई सकारात्मक विस्तृत भावभूमि हासिल कर रही है और आशावादिता ही तो विकास में सहायक होती है।

(6) आदिवासी साहित्य लेखन में आदिवासियों का अपना इतिहास बखूबी व्यक्त हो रहा है। चाहे साहित्य की कोई विधा हो, आदिवासियों के इतिहास को लक्षित किया जा सकता है। उनकी बोलियों के लोक साहित्य में वह अधिक गहराई से व्यक्त हो रहा है।

(7) आदिवासियों की मातृभाषा आज खतरे में है। इसके लिए शासन भी जिम्मेदार है, वहीं स्वयं

विश्वासी एक्का

चर्चित आदिवासी कवयित्री और कथाकार। हिंदी सहित कुडुख में लेखन। कविता संग्रह 'लछमनिया का चूल्हा' और कहानी पुस्तक 'कजरी' प्रकाशित। संप्रति : राजमोहिनी देवी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अंबिकापुर में सहायक प्रोफेसर।

आदिवासी समुदाय भी जिम्मेदार है। पढ़ा-लिखा आदिवासी वर्ग अपनी मातृभाषा से दूर होता जा रहा है। इसके पीछे कई कारण हैं। सरकार को शिक्षा को मातृभाषा से जोड़ना चाहिए।

(8) आदिवासी विमर्श मुख्यधारा की भाषाओं के साथ आदिवासी भाषा-साहित्य में भी दिखाई दे रहा है। चिंता का विषय है कि आदिवासी भाषा का लिखित साहित्य थोड़ा है। वाचिक परंपरा का साहित्य लोक साहित्य के रूप में बड़े पैमाने पर विद्यमान है, उसमें आदिवासी विमर्श है। लेकिन यदि इसे लिखित रूप में परिणत नहीं किया गया तो यह धीरे-धीरे विलुप्त हो जाएगा, इस बात की आशंका है।

(9) दलित विमर्श का सबसे महत्वपूर्ण आधार उनकी आत्मकथाएँ रही हैं। दलित सवर्णों के आस-पास रहे, उनकी सेवकाई की, लेकिन पुरस्कार के रूप में उन्हें अधिकाधिक अपमानित होना पड़ा। दलितों की यह मर्मांतक पीड़ा उनकी आत्मकथाओं में अभिव्यक्त हुई है। आदिवासी भी शोषण और उत्पीड़न के शिकार रहे हैं। पहले उनका निवास नगरों से दूर जंगल, पहाड़ और दुर्गम स्थलों में रहा, उनकी एक अलग ही दुनिया थी। अत: वे दलितों की तरह अपमानित होने से बचे रहे। वैसे शोषण के स्तर पर दोनों ही दलित कहलाएंगे। 1968 में भारतीय अंग्रेजी लेखकों की पांच आत्मकथाएँ छपी थीं, जिनमें सीता रत्नमाला की आत्मकथा 'बियोंड द जंगल' का अलग स्थान है। इन आत्मकथाओं में उनका प्रकृति पर आधारित कल कल ध्वनि करती नदियों-से नैसर्गिक जीवन का चित्रण है।

(10) आदिवासी विमर्श के लिए सबसे महत्वपूर्ण विधा के रूप में इस समय कविता ही दिखाई पड़ती है। आदिवासियों की प्रकृति के अनुरूप कविता ही उनके विमर्शों को सहजता से रूपायित करती जान पड़ती है। वैसे कहानियों और उपन्यासों में विमर्श और विचारों के लिए अधिक संभावना बन सकती है। आदिवासी साहित्यकारों को इन विधाओं में भी प्रवृत्त होने की जरूरत है।

वर्तमान में आदिवासी साहित्य के क्षेत्र में कविता ही सबसे समृद्ध विधा है। प्रमुख कवियों में राम दयाल मुंडा, रोज केरकेट्टा, तेमसुला आओ, महादेव टोप्पो, वाल्टर भेंगरा 'तरुण', हरिराम मीणा, वाहरू सोनवाने, जोराम मालाम नबाम, निर्मला पुतुल, ग्रेस कुजूर, वंदना टेटे, अनुज लुगुन, केदार प्रसाद मीणा, हीरा मीणा, नीतिशा खलखो, अन्ना माधुरी तिर्की, ज्योति लकड़ा, जसिंता केरकेट्टा जैसे कवियों-कवयित्रियों की लंबी सूची है। महादेव टोप्पो की 'फिर भी हम कहते रहे तुम्हें जोहार', वाहरू सोनवाने की 'मेघा और आदिवासी', ग्रेस कुजूर की लंबी कविता 'एक औरजनी शिकार', भुजंग मेश्राम की 'ओ मेरे बिरसा', लखन लाल पाल की 'तीखी नोकों के पदचिह्न', निर्मला पुतुल की 'चुका सोरेन से' और अनुज लुगुन की कविता 'हमारी अर्थी शाही नहीं हो सकती' पाठकों पर गहरा प्रभाव डालती है।

(11) आदिवासी साहित्य एक अलग तरह का सौंदर्य रच रहा है। उसके सौंदर्य का मानक मुख्यधारा की भाषाओं से भिन्न है। अज्ञेय ने अपनी नायिका को चंद्रमा या हिरनी-सी नहीं, 'कलगी बाजरे की' कहा था, फिर आदिवासी साहित्य तो एक अलग मिजाज का साहित्य है। उसका सौंदर्यशास्त्र भी अलग है। मुख्यधारा के भाषा और साहित्य का सौंदर्यशास्त्र आनंद पर आधारित है और दलित साहित्य का व्यथा और वेदना पर, तो आदिवासी साहित्य नैसर्गिकता, पारदर्शिता, आडंबरहीनता और

सहजीविता आदि मानकों पर आधारित है। उसकी भाषिक संरचना भिन्न है और उसके बिंब, प्रतीक और मिथक भी भिन्न हैं। समीक्षकों की दृष्टि में आदिवासी साहित्य भले कलावादी न हो, अपनी सवर्ण मानसिकता और आदिवासी जीवन शैली की अनभिज्ञता के कारण वे समीक्षक आदिवासी साहित्य के वास्तविक सौंदर्य को नकार दें और उसे साहित्य ही न समझें, यह संभव है। ऐसी स्थिति में आदिवासी साहित्य के लिए अलग सौंदर्यशास्त्र के निर्माण की आवश्यकता होगी। कला प्रेमियों को अर्ध वस्त्र में स्तनपान कराती आदिवासी युवती, आखेटक और हल चलाते आदिवासी पुरुष पर आधारित पेंटिंग मोहक लगती है तो आदिवासी साहित्यकारों के विचार क्यों नहीं अच्छे लगते?

(12) आदिवासी समाज को किससे और क्यों खतरा है? उसे हिंदुत्ववाद और पूंजीवाद दोनों से खतरा है। हिंदुत्ववाद आदिवासी समाज को दिग्भ्रमित कर रहा है तो पूंजीवाद विकास का सपना दिखा कर उसे समूल उखाड़ फेंकना चाहता है। दरअसल आदिवासी समाज को खुद चेतना संपन्न बनना होगा।

सहायक प्राध्यापिका, राजमोहिनी देवी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अंबिकापुर, सरगुजा छतीसगढ़।

लघुकथा

तरीका

सुधीर निगम

एक नेत्रहीन व्यक्ति किसी बड़ी हवेली के सामने बैठ कर भीख मांग रहा था। उसने अपने पास एक छोटा-सा बोर्ड लगाया हुआ था जिस पर लिखा था- 'मैं अंधा हूँ, भगवान के लिए मेरी मदद करें।'

दोपहर होने को आई थी, पर उसके भिक्षापात्र में कुछ ही सिक्के आए थे। तभी वहाँ से एक रचनाकार गुजरा। उसकी नजर अंधे भिखारी पर पड़ी। उसने बोर्ड पर लिखी इबारत देखी, कुछ विचार किया फिर उसे मिटा कर उस पर कुछ और नया लिखा तथा भिक्षापात्र में कुछ सिक्के डाल कर चला गया।

शाम को जब वह व्यक्ति वापस लौटा तो उसने देखा कि भिखारी के भिक्षापात्र में ढेर सारे सिक्के थे। भिखारी उसके कदमों की आहट पहचान गया। उसने रचनाकार से पूछा, 'तुम वही व्यक्ति हो जो सुबह आए थे। यह बताइए आपने तख्ती पर ऐसा क्या लिख दिया था जिससे मुझे आज तक की सबसे ज्यादा भिक्षा मिली।'

रचनाकार ने कहा, 'कुछ खास नहीं। मैंने तुम्हारी ही बात को दूसरे तरीके से लिख दिया था।' 'जरा मुझे भी बताइए।' भिखारी ने दुबारा पूछा।

'मैंने लिखा था', रचनाकार ने बताया, 'आज से वसंत शुरू हो रहा है, लेकिन मैं देख नहीं सकता।'

104-ए/315, रामबाग, कानपुर-208012, मो.9839164507

ISSN 2394-1723

Vagarth March 2019 Regd.No. 61730/95
Publication : March 2019

हिंदी की गरिमा का सांस्कृतिक उद्घोष

हिंदी साहित्य ज्ञानकोश

7 खंड ■ 2660 प्रविष्टियाँ ■ 4,650 पृष्ठ

मूल्य : सजिल्द ₹ 5000/-
पेपरबैक : ₹ 2000/-

इस ज्ञानकोश में साहित्य से संबंधित विषयों-साहित्येतिहास, साहित्य सिद्धांत, भाषाविज्ञान आदि के अलावा बहुलतावादी भारतीय संस्कृति, धर्म, दर्शन, पौराणिक-मिथकीय चरित्र, लोक संस्कृति, कला, समाज विज्ञान, पश्चिमी सिद्धांतकार, इतिहास, मीडिया, अनुवाद विज्ञान, मानवाधिकार, पर्यावरण, उत्तर-औपनिवेशिक विमर्श, वैश्वीकरण, राष्ट्रीय भाषाओं आदि विषयों पर 2660 प्रविष्टियाँ हैं।

प्रधान संपादक : शंभुनाथ संयोजक : कुसुम खेमानी

संपादक मंडल : राधावल्लभ त्रिपाठी, जवरीमल्ल पारख, अवधेश प्रधान
अवधेश कुमार सिंह, अवधेश प्रसाद सिंह

भाषा संपादक : राजकिशोर

सन्मार्ग हिन्दी दैनिक

वाणी प्रकाशन

पुस्तक आदेश हेतु सम्पर्क करें :

वाणी प्रकाशन हेल्पलाइन : +91 9643331304

ई-मेल : sales@vaniprakashan.in; marketing@vaniprakashan.in; vaniprakashan@gmail.com

प्रकाशक : नन्दलाल शाह द्वारा भारतीय भाषा परिषद 36ए शेक्सपियर सरणी, कोलकाता 17 के लिए मुद्रित एवं प्रकाशित
मुद्रक : सी. देवनाथ, सत्ययुग एम्प्लाइज को-ऑपरेटिव इण्डस्ट्रीयल सोसाइटी लि., 13 प्रफुल्ल सरकार स्ट्रीट, कोलकाता 700072
संपादक : शंभुनाथ